डाक-पंजीयन म.प्र./भोपाल/4-472/2021-23
पोस्टिंग दिनांक : प्रतिमाह दिनांक 2 से 3, पृष्ठ सं. 210
प्रकाशन दिनांक : 1 से 1 प्रतिमाह

आर.एन.आई क्र. : 38470/83
आई.एस.एस.एन. क्र. : 2456-7167

मूल्य 25/-

अक्षरा
साहित्य की मासिकी

मार्च 2022

स्तंभ
रमेशचन्द्र शाह, कुसुमलता केडिया
एवं रमेश दवे

आलेख
रामेश्वर मिश्र पंकज, ओम निश्चल
पवन माथुर, सदानन्द प्रसाद गुप्त
जितेन्द्र श्रीवास्तव, करूणाशंकर उपाध्याय
प्रभुदयाल मिश्र, कृष्ण गोपाल मिश्र
शैलेन्द्र कुमार शर्मा, ममता खेड़े, नेहा कल्याणी

मालती जोशी, यतीन्द्र मिश्र, बलदेवानन्द सागर
श्रीराम परिहार, श्रुति जौहरी

सच्चिदानंद जोशी

उमा सत्यानारायण

प्रवासी
तेजेन्द्र शर्मा
दिव्या माथुर

प्रमोद भार्गव, संजय कुमार सिंह
अभिषेक मुखर्जी

असंगघोष, केशव शरण, पुष्कर राय जोशी
मीना सिंह, हंसा पाठक, राजेन्द्र निशेश
सुशांत सुप्रिय, सलिल सरोज, प्रभा मुजुमदार

अज्ञेय और देश विभाजन की त्रासदी

– नेहा कल्याणी

जन्म – 14 दिसंबर 1977।
शिक्षा – एम.ए., पीएच.डी।
रचनाएँ– चार पुस्तकें प्रकाशित।
सम्मान – क्षेत्रीय सम्मानों द्वारा सम्मानित।

वैयक्तिक यथार्थबोध का अपने साहित्य में चित्रण करने वाले लेखकों में अज्ञेय का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। उनकी रचनाओं में मानवीय संवेदनाएँ अभिव्यक्त होती हैं। अन्तर्मन को पढ़ने में सक्षम अज्ञेय की दृष्टि और रचनाएँ व्यक्ति केन्द्रित होती हैं, जिसमें व्यक्ति का अन्तर्द्वन्द्व अत्यन्त संवेदनशीलता से व्यक्त होता है एवं वैयक्तिक यथार्थबोध सूक्ष्मता से परिलक्षित होता है।

संवेदनाएँ मनुष्य के व्यक्तिगत यथार्थ का एक अभिन्न अंग हैं। साहित्य में मनुष्य के संपूर्णता के साथ यथार्थ को समझना अति आवश्यक हो जाता है। वैयक्तिक यथार्थबोध का साहित्यिक सिद्धान्त इस चित्रण को और गहराई से समझने और मनुष्य के अन्तर्जगत को पहचानने के लिये महत्त्वपूर्ण है। वैयक्तिक यथार्थबोध के अन्तर्गत अन्तश्चेतना और व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का समावेश होता है। अन्तश्चेतना में अहं प्रधान होता है। अहं का अर्थ है, अस्तित्व। अन्तश्चेतना के द्वारा स्वानुभूति से ही मनुष्य को वैयक्तिकता का बोध होता है। इस बोध को समझने के लिये उपयुक्त वैयक्तिक यथार्थबोध के सिद्धान्त के बिना साहित्यिक विश्लेषण की दुनिया अधूरी है।

1947 में भारत विभाजन से उपजे साम्प्रदायिक उन्माद के कारण अविस्मरणीय दंगे हुए। निर्दोष और निरीह जनता एक स्थान से उजड़कर दूसरी जगह जाने और बसने को मजबूर हुई। यह भारतीय इतिहास की अभूतपूर्व त्रासदी थी। किन्तु आश्चर्य है कि देश विभाजन और इस मर्मस्पर्शी त्रासदी पर न तो तत्कालीन समय में न ही बाद में निराला, पंत, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, मुक्तिबोध, शमशेर बहादुर सिंह, और त्रिलोचन में से किसी ने भी कोई महत्त्वपूर्ण कविता नहीं लिखी है। तत्कालीन कवियों में से केवल अज्ञेय ने 12 अक्टूबर 1947 से 12 नवम्बर 1947 तक शरणार्थी शीर्षक से 11 कवितायें और पाँच कहानियाँ 'शरणदाता', 'लेटर बक्स', 'मुस्लिम–मुस्लिम भाई–भाई', 'रमंते तत्र देवता', 'बदला' लिखी हैं। अज्ञेय ने 1948 में प्रकाशित शरणार्थी की भूमिका में यह भी स्पष्ट किया कि इन कहानियों और कविताओं की विषयवस्तु सच्ची घटनाओं पर आधारित हैं। अपने लेखकीय कौशल का प्रयोग करके उन्होंने विभाजन की त्रासदी को बहुत ही रचनात्मक ढंग से अज्ञेय ने प्रस्तुत किया। विभाजन की त्रासदी की जटिल समग्रता की अभिव्यक्ति उपन्यासों और कहानियों में ही हुई है, क्योंकि कथा साहित्य ही तत्कालीन समय के इतिहास एवं मनुष्य विरोधी प्रवृतियों की निर्मम आलोचना के लिए भी से लोहा लेने में सक्षम रहा है। आजादी के साथ ही भारतीय उपमहाद्वीप को विकट परिस्थितियों से रूबरू होना पड़ा भारत विभाजन ने शरणार्थी समस्या को जन्म दिया। विभाजन की त्रासदी के बाद का संबंध पंजाब, बंगाल, जम्मू कश्मीर आदि राज्यों में सर्वाधिक हुआ; जिनका सम्बन्ध अज्ञेय से रहा है।

मानवीय संकट की गंभीरता का अनुमान करते हुए कवि अज्ञेय ने अपने कविताओं और कहानियों में इस त्रासदी को रचनात्मक ढंग से अपने लेख के कौशल द्वारा प्रस्तुत किया। मानव की मानव के प्रति घृणा अज्ञेय को अंदर तक हिला कर रख देती है। धर्म और सांप्रदायिकता की रचनात्मक अभिव्यक्ति उनके व्यक्तित्व के अन्य अनचीन्हे पहलुओं की ओर संकेत करती हुई उनके ऊपर लगे व्यक्तिवादी आरोपों का मुँह तोड़ जवाब देती है। विभाजन की त्रासदी ने मानव जीवन को स्थिर बना दिया था, कहीं पर भी ठहराव नहीं था; मानव गरिमा का प्रश्न बहुत पीछे छूट गया था। आजादी का जश्न अभी क्षितिज तक भी न चढ़ सका था कि मुल्क के दो फाड़ होने का बिगुल बज गया और सांप्रदायिक सद्भाव तार-तार हो गया; जिसके साथ ही दोनों तरफ की निर्दोष जनता के खून का एक दरिया बह निकला। लाखों लोग मारे गए, करोड़ों बेघर हुए। लगभग एक लाख महिलाओं; युवतियों का अपहरण हुआ। यह विचारणीय है कि इतना बड़ा खून-खराबा और बर्बरता दुनिया के किसी भी देश में नहीं हुई। बँटवारे के इस खूनी वटवृक्ष जिसकी तपिश आज भी ठंडी नहीं हो पाई है, की गर्मी किसी भी कवि की भावनाओं को उद्वेलित नहीं कर सकी। किन्तु अज्ञेय इस समस्त स्थिति को समग्रता से चित्रित करते हुए हर एक स्थिति के सूक्ष्म से सूक्ष्म पहलुओं को छूते हैं। स्थूल वातावरण और मनोस्थिति को एकाकार करना उनके रचना कौशल की सफलता हैं। विभाजन पर लिखी गयी उनकी कवितायें किसी बंद कमरे में बैठकर नहीं लिखी गयीं, अपितु भारतीय जनता की दयनीय दशा को देखकर, द्रवित होते हुए सृजित हुई है।

इलाहाबाद स्टेशन पर 12 अक्टूबर 1947 को रचित उनकी पहली कविता में घृणा के तांडव की भयावहता की समझ अभिव्यक्त हुई है। यह घृणा उस समय हिंसा और प्रतिहिंसा के बीच खूँखार युद्ध के रूप में प्रकट हो रही थी। विभाजन की त्रासदी का संचालन और नियमन करने वाली थी, जिसने इंसानियत और हैवानियत का फर्क मिटा दिया था। प्रेम को अपदस्थ करके जब घृणा मानव हृदय में अपना घर बना लेती है तो मानवीयता का नाश होने लगता है, मनुष्य पशु से भी बदतर बन जाता है। भारत विभाजन के बाद मानव की आँखों में ऐसी ही घृणा देखकर कवि लिखते हैं अज्ञेय ने लिखा है कि-

'कोटरों से गिलगिली घृणा झाँकती है।
मान लेते यह किसी शीत रक्त, जड़ दृष्टि,
जल-तलवासी तेंदुए का विष नेत्र है
और तमजात सब जन्तुओं से
मानव का वैर है
क्योंकि यह सुत है प्रकाश का -
यदि इनमें न होता यह स्थिर तप्त स्पन्दन तो!
मानव से मानव की मिलती है आँख, पर
कोटरों से गिलगिली घृणा झाँकती है।'

मेरठ में 15 अक्टूबर 1947 को सृजित दूसरी कविता सांकेतिकता के माध्यम से दूरगामी अर्थ की अभिव्यक्ति है। स्वाधीनता आंदोलन के आखिरी दौर की राजनीति में साम्प्रदायिकता के जो बीज बोये गए थे, उनकी फसल है। विभाजन के समय की घृणा के आंतक का सर्वग्रासी फैलाव। इस कविता में एक ओर तत्कालीन राजनीति की निर्मम आलोचना है और उसके दूरगामी परिणामों की चिंता भी। सांप्रदायिकता की आग का प्रमुख कारण राजनीति को मानते हुए 'पक गयी खेती' शीर्षक से लिखी गयी कविता में वे अपने भावों की अभिव्यक्ति करते हुए लिखते हैं -

'वैर की परनालियों से हँस-हँस के
हमने सींची जो राजनीति की रेती
उसमें आज बह रही हैं खून की नदियाँ।
कल ही जिसमें खाक मिट्टी कह के हमने थूका था
घृणा की आज उसमें पक गयी खेती
फसल काटने को अगली सदियाँ हैं।'

इलाहाबाद में 23 अक्टूबर 1947 को रचित तीसरी कविता में विभाजन के समय फैली हिंसा और बर्बरता के सर्वव्यापी विस्तार और दारुण प्रभाव का मूर्त तथा गतिमान चित्रण उनकी कविता 'ठाँव नहीं' में है –

'शहरों में कहर पड़ा है और ठाँव नहीं गाँव में
अंतर में खतरे के शंख बजे, दुराशा के पंख लगे पाँव में
त्राहि! त्राहि! शरण! शरण!
रुकते नहीं युगल चरण
थमती नहीं भीतर कही गूँज रही एकसुर रटना
कैसे बचें कैसे बचें कैसे बचें कैसे बचें
आन मान वह तो उफान है गुरुर का–
पहली जरूरत है जान से चिपटना।'

24 अक्टूबर 1947 को इलाहाबाद में सृजित चौथी 'मिर्गी पड़ी' कविता में अज्ञेय की काव्य कला प्रतिलक्षित होती है। बिंबधर्मिता, प्रतीकात्मकता और आजादी की विडंबनापूर्ण परिणति पर व्यंग्य उनकी कविताओं में दृष्टिगोचर होता है। वे अपनी गंभीर काव्य रचना के साथ ही व्यंग्य की जंजीरों से भी मुक्त नहीं हो पाते; इसीलिए सांप्रदायिक उन्माद को मिर्गी के रोगी के साथ तुलना करते हुए कवि लिखते हैं कि–

किन्तु कहीं भी तो नहीं दिखती शिथिलता –
तनी नसे, कसी मुट्ठी, भिंचे दाँत,ऐंठी माँस-पेशियाँ –
वासना स्थागित होगी किन्तु झाग झर रहा मुँह से!
आज जाने किस हिंसक डर ने
देश को बेखबरी में डस लिया!
संस्कृति की चेतना मुरझा गयी!
मिर्गी का दौरा पड़ा इच्छशक्ति बुझ गयी!
मुक्ति-लब्ध राष्ट्र की जो देह होती लोथ है –
ओंठ खिंचे, भिंचे दाँतों में से पूय झाग लगे झरने!
सारा राष्ट्र मिर्गी ने ग्रस लिया!

29 अक्टूबर को इलाहाबाद में सृजित पाँचवी कविता में दंगों और हत्याकांडों की भयावह परिस्थितियों को मूर्त रूप में चित्रित किया है। इसे आत्यंतिक कविता भी कहा जा सकता है क्योंकि इस कविता का अर्थ बुद्धि और कल्पना को इतने तनाव में डाल देता है कि सहज सोच का ही अंत हो जाता है।

'सोचने से बचते रहे थे, अब आई अनुशोचना।
रूढ़ियों से सरे नहीं (अटल रहे तभी तो होगी वह मरजाद!)
अब अनुसरेंगे–नाक में नाक में नकेल डाल जो भी खींच ले चलेगा
उसी को! चलो, चलो, चाहे कहीं चलो, बस बहने दो;
व्यवस्था के, शांति के, आत्म गौरव के, धीरज के, ढूह सब ढहने दो
बुद्धि जब जड़ हो तो माँसपेशियों की तड़पन को, जीवन की धड़कन
मान ले–
(जब घोर जाड़े में कंबल का सम्बल ना होता पास तब हम
जबड़े की किट किट से ही बाँधते हैं आस कुछ गरमाई की)
भागो, भागो, चाहे जिस और भागो, अपना नहीं है, कोई गति ही
सहारा है यहाँ–रुकेंगे तो मरेंगे!'

और 29 अक्टूबर को इलाहाबाद में ही छठी कविता समानान्तर साँप विभाजन की त्रासदी पर रचित एक महाकाव्यात्मक कविता है। इस कविता में अपने समय और समाज के मनुष्य की प्रकृति, नियति और दुर्गति की अभिव्यंजना हुई है। कवि ने अपने प्रिय प्रतीक साँप का रूपक के रूप में प्रयोग किया है। उसके माध्यम से वे मानव जीवन और मानवीय संवेदना की विसंगतियों को अभिव्यक्त करते हैं। विभाजन त्रासदी में लोगों के पलायन का जो प्रलय प्रवाह हुआ, उस पीड़ा की अभिव्यक्ति इस कविता में है। अपनी ही जन्मभूमि और जड़ों से उखड़ने-उजड़ने का दर्द, बेबसी,आशा-निराशा के बीच तड़पती, बिलखती इंसानियत की व्यंजना है। धर्म, मर्यादा, परम्परा आदि की सब बातें उनका छल है, जिसकी आड़ में अपने नापाक इरादों को वे छुपाने की कोशिश करते हैं। प्रेमचन्द ने 'साम्प्रदायिकता और संस्कृति' लेख में कहा था कि 'साम्प्रदायिकता हमेशा संस्कृति का लबादा ओढ़कर आती है, क्योंकि उसे अपने नग्न रूप में आते हुए लज्जा आती है।' अज्ञेय ने 'समानान्तर साँप-7' कविता में साम्प्रदायिकता की

आड़ में छिपी दरिंदगी, रूढ़िवादिता, स्वार्थों को उद्घाटित किया है।

नहीं है यह धर्म,
ये तो पैंतरे हैं उन दरिंदो के
रूढ़ि के नाखून पर मरजाद की मखमल चढ़ा कर
जो विचारों पर झपट्टा मारते हैं -
बड़े स्वार्थों की कुटिल चालें!
साथ आओ -
गिलगिले ये साँप वैरी हैं हमारे
इन्हें आज पछाड़ दो
यह मकर की तनी झिल्ली फाड़ दो
केंचुलें हैं केंचुलें हैं झाड़ दो! (समानान्तर साँप-7)

काशी में 4 नवम्बर को लिखित गाड़ी रुक गयी है सातवीं कविता में उस मनुष्यता की चीख की कविता है जो धर्म और सम्प्रदायों की जड़ताओं और संकीर्णताओं से स्वतंत्र होती है। साम्प्रदायिकता से उपजी घृणा के जहर की तीव्रता और व्यर्थता को व्यंजित करने वाली आठवीं कविता काशी में 5 नवम्बर को लिखी गयी।

नवी कविता काशी से इलाहाबाद की रेल यात्रा में 6 नवम्बर को में पहला आकर्षण इसका शीर्षक है-श्री श्रीमद्धर्मधुरन्धरपंडा। इस कविता में धर्म के पाखंडपूर्ण आचरणपूर्ण के बोध से उत्पन्न व्यंग्य बोध। इस कविता में अपमानित और लांछित होती स्त्रियाँ द्वारा अपनी प्रतिष्ठा बचाने की चीत्कार ही सब और सुनाई देती है। कृष्ण और द्रोपदी की अंतर्कथा को आधार बनाकर कहा गया है -

सदा द्रोपदी की लज्जा को, ढका कृष्ण ने चीर बढ़ाकर
धर्म हमारा है करुणाकर, हम न करेंगे बहिष्कार
म्लेच्छ -घर्षिता का भी, चाहे
उस लांछन की छाप अमिट है।
साथ न बैठे - हाथ हमारे
वह पायेगी
सदा दया का टुकड़ -

7 नवम्बर को इलाहाबाद में लिखी गयी दसवीं कविता में व्यंग्य तथा विडम्बना से पूर्ण दलित दर्द की अभिव्यक्ति है, और मुरादाबाद रेलवे स्टेशन पर आधी रात के समय 12 नवम्बर को रचित11 वीं कविता में एक और 1947 में मिले विडम्बना पूर्ण स्वराज्य की आलोचना है तो दूसरी और शरणार्थी जीवन की उपेक्षा, मज़बूरी और अपमान की अभिव्यक्ति है। इस काव्य संग्रह की रचना करते समय वे देश की तत्कालीन स्थिति से विचलित और बेचैन होकर वे निरंतर यात्रा कर रहे थे।

अज्ञेय की अपनी अलग दुनिया है-उसकी खास रचनात्मक बुनावट है। स्वतंत्रता और कुछ उसके समीप की दूसरी मूल्य धारणायें इस दुनिया को भीतर बाहर से प्रभावित करती है। अज्ञेय कुछ भ्रमों से युक्त है जैसे लोकप्रियता को लेकर उनके मन में कोई भ्रम नहीं है, बल्कि लोकप्रियता के मिथ से मुक्त होने पर रचनात्मक अस्मिता के प्रति जो सहजता बढ़ती है, उसका मूल्य वे जानते है। स्मृतियों और दुर्लभ इच्छाओं की टकराहट में कहीं नि:शब्द स्थिति में जीवित अज्ञेय का अनुभव अपनी एकांत विकलता और अभिव्यक्ति से पूर्व का तनाव है। उनकी कविताओं में परिचय में, पहचान में, प्रतीक्षा में, विभाजन में जो पीड़ा उभरती है, वह पीड़ा का निषेध नहीं अपितु उसे गहरे ले जाकर चुनौती रूप में स्वीकारने की स्वाधीन दृष्टि है। विभाजन के अंधकार और उम्मीद की दुर्लभ संधि जिसे कवि दृष्टि पहचानती है, अपनी जड़ों से कटने की पीड़ा की अभिव्यक्ति उनकी इन कविताओ में हुई है। आपातस्थिति के तनाव में नागरिक मन की विक्षुब्धता उनके काव्य में प्रकट हुई है।

शरणार्थी शीर्षक से उनकी कविताओं में गहरी मानवीय संवेदनशीलता, भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के इतिहास की विसंगतियों की समझ, शरणार्थी होने और बनने की पीड़ा की अनुभूति, तड़पती और बिलखती मानवीयता की पहचान,

बिखरती नैतिकता का दर्द, नारी अस्मिता और प्रतिष्ठा के प्रति करुणा, धर्म के नाम पर शर्मसार होती इंसानियत, स्वराज्य के खोखले अर्थ की विडंबना की अभिव्यक्ति है। देश विभाजन के समय धर्म और जाति के नाम पर जो बर्बरता का कृत्य हो रहा था, उसका उत्तर अज्ञेय ने वो; कवियों की तरह न मौन से दिया न विलाप से अपितु अपने मन में उफनते विक्षोभ, आक्रोश और वेदना के ज्वार की अभिव्यक्ति उन्होंने अपने साहित्य सृजन में की। अज्ञेय ने न केवल अपनी कविताओं में अपितु उन्होंने अपनी कहानियों -लेटर बॉक्स, शरणदाता, मुस्लिम -मुस्लिम भाई -भाई, रमन्ते तत्र देवता : और बदला में भी देश विभाजन की त्रासदी के दर्द को अभिव्यक्ति देने का सफल प्रयास किया है। उनकी कविताओं में सांकेतिकता, अर्थ की बहुलता और व्यंजकता भी है किन्तु कहानियों में स्थितियों, व्यक्तियों और घटनाओ का ब्यौरा है, विस्तार है। संवेदन शीलता और बौद्धिकता से ओतप्रोत उनकी कविताओं में विरोध, करुणा और व्यंग्य का स्वर प्रतिफलित होता है।

भारत विभाजन, राष्ट्रीय आंदोलन की एक अवांछित व विकृत परिणति थी जो सदियों तक भारतीय राजनीति के स्वरूप, सामाजिक-संरचना, आर्थिक उन्नति और वैयक्तिक जीवन को प्रभावित करने वाला मुख्य कारण रहा है। यह आधुनिक भारत के इतिहास की भीषणतम त्रासदी थी जिसने व्यक्ति, समूह और न केवल राष्ट्रीय स्तर पर अपितु वैश्विक स्तर पर भी भारत की गरिमा, सांस्कृतिक, धार्मिक और आर्थिक संरचनाओं को पूरी तरह से छिन्न-भिन्न कर दिया। इस त्रासदी का दंश न केवल तत्कालीन स्थितियों पर अपितु अनुवांशिक रूप से व्यक्तियों पर प्रतिफलित होता रहा है। विभाजन केंद्रित साहित्य की आलोचना करने के क्रम में एक बात जिस पर गौर किया जाना बेहद जरूरी है वह ये कि तत्कालीन परिवेश अत्यधिक जटिल था, इसलिए विभाजनजन्य संवेदना भी अनेक जटिल रूपों में इन साहित्य में देखने को मिलता है। इसलिए कहीं व्यक्ति सामाजिक परिवेश को बदलने की कोशिश करता रहा तो कहीं इस परिवेश को आत्मसात कर अपनी दयनीयता का दोष अपने भाग्य को देता रहा। विभाजन से संबंधित साहित्य आज एक इतिहास के रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत है। और निर्विवाद रूप से हम यह कह सकते हैं कि विभाजन संबंधी साहित्य-लेखन ने सामाजिक विकास के क्रम में एक उच्च स्तर की प्रगतिशील एवं ऐतिहासिक भूमिका निभाई है। इसने इतिहास के बरअक्स एक समानांतर इतिहास लिखने की भी कोशिश की है जिसमें केवल आँकड़े और तथ्य ही नहीं है, बल्कि मानवीय संवेदनाओं की पराकाष्ठा भी है। साम्प्रदायिकता स्वत:स्फूर्त परिघटना नहीं है कि मानवता के क्षरण से पनपी हो, बल्कि इसके कारण सामाजिक-आर्थिक ताने-बाने और ऐतिहासिक परिस्थितियों में हैं, वर्ग-स्वार्थों की टकराहट में हैं, संकीर्ण व सस्ती राजनीति में हैं। विभाजन से उपजी त्रासदी, शरणार्थियों की दयनीय हालत, धार्मिक उन्माद में पनपती घोर घृणा के वर्णन से मन्द पड़ती मानवता और शरणार्थियों के प्रति सहानुभूति पैदा करने में अज्ञेय की कविताएँ कामयाब होती हैं।

यह भी प्रतीकात्मक ही था कि 11 भागों की इस शृंखला की अधिकतर कवितायें अलग-अलग रेलवे स्टेशनों के प्लेटफॉर्म या प्रतीक्षालयों में लिखी गई थीं-पहली कविता इलाहाबाद रेलवे स्टेशन पर लिखी गई थी, वहीं आखिरी आधी रात के किसी समय मुरादाबाद के रेलवे स्टेशन पर ये हिंदी साहित्य के आलोचकों की इस ग़लती को भी दिखाती हैं कि कैसे किसी महत्त्वपूर्ण कवि द्वारा विभाजन के बाद उसके आस-पास हो रही घटनाओं पर कविताओं के रूप में दर्ज हुई प्रतिक्रियाओं को ज़्यादातर आलोचकों द्वारा नज़रअंदाज़ कर दिया गया।

321 यशोदा, बैंक कॉलोनी, यादव नगर
वतन मेडिकल के सामने, नागपुर 440026 (महा.)
मो. - 8237983333